आर. एस. मोंगिया और के. सी. गुप्ता, जे. जे.के समक्ष

पी. एन. *वर्मा,-याचिकाकर्ता*

बनाम

अध्यक्ष, एफ. सी. आई. और *अन्य-उत्तरदाता*

1998 का सी. डब्ल्यू. पी. नंबर 14309

10जुलाई, 2000

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 226-भारतीय *खाद्य निगम (कर्मचारी) विनियम, 1971-नियम।58 & 59—नियमित विभागीय* जांच *में याचिकाकर्ता को सभी आरोपों से दोषमुक्त करने वाला पूछताछ अधिकारी-अनुशासनात्मक प्राधिकरण जांच अधिकारी के निष्कर्षों* से *असहमत है और रिपोर्ट पर याचिकाकर्ता की टिप्पणियों पर विचार करने के बाद जाँच अधिकारी रैंक में कमी का जुर्माना लगाता है-याचिकाकर्ता को असहमति के कारण नहीं बताए गए-अपील प्राधिकरण याचिकाकर्ता की अपील को अस्वीकार कर रहा है-क्या असहमति के कारणों की गैर-आपूर्ति ने याचिकाकर्ता को पूर्वाग्रहित किया है-निर्धारित किया, हाँ-यह उचित* अवसर *से पूरी तरह से इनकार करने के बराबर है और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का* उल्लंघन *करता है-विवादित आदेश निगम को कानून के तहत याचिकाकर्ता के खिलाफ आगे बढ़ने की स्वतंत्रता के साथ रद्द कर दिया गया।*

अभिनिर्धारित किया गया कि यदि जांच अधिकारी स्वयं अनुशासनात्मक प्राधिकारी नहीं है, तो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के लिए आवश्यक है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी को यह दिखाने के लिए कि उसे जांच अधिकारी से सहमत नहीं होना चाहिए, अपराधी अधिकारी को जांच रिपोर्ट प्रदान की जानी चाहिए।इसके विपरीत, यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी की रिपोर्ट से असहमत है, तो प्राकृतिक न्याय के नियमों के लिए आवश्यक होगा कि अपराधी अधिकारी को यह पता होना चाहिए कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से सहमत क्यों नहीं है और उसे अनुशासनात्मक प्राधिकरण को ऐसा न करने के लिए मनाने का मौका दिया जाना चाहिए।यह प्राकृतिक न्याय के नियमों की न्यूनतम आवश्यकता है।

(पैरा 7)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि जांच रिपोर्ट के साथ असहमति के कारणों की गैर-आपूर्ति ने याचिकाकर्ता को स्पष्ट रूप से पूर्वाग्रहित किया है क्योंकि सजा देने से पहले, वह कभी नहीं जानता था कि जांच अधिकारी की रिपोर्ट से असहमत होने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकरण के साथ क्या वजन(कारण) है।

(पैरा 7)

याचिकाकर्ता की ओर *से अधिवक्ता अजय शारदा।*

प्रतिवादी की ओर *से अधिवक्ता हेमंत गुप्ता।*

निर्णय

आर एस मोंगिया, जे

(1) याचिकाकर्ता, जो संगरूर में भारतीय खाद्य निगम (इसके बाद 'निगम' के रूप में संदर्भित) के साथ उप प्रबंधक (गुणवत्ता नियंत्रण) के रूप में काम कर रहा था, उसे निगम द्वारा 29 जुलाई, 1995 *के* पत्र के माध्यम से भारतीय खाद्य निगम (कर्मचारी) विनियम, 1971 (इसके बाद 'विनियम' के रूप में संदर्भित) के विनियम 58 के तहत आरोप पत्र दिया गया था।उन्होंने आरोप पत्र का जवाब दाखिल किया।हालांकि, जवाब संतोषजनक नहीं पाए जाने पर, एक नियमित विभागीय जांच का आदेश दिया गया और एक श्री के. एन. श्रीवास्तव, संयुक्त सचिव (सेवानिवृत्त) को एक जांच अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया, जिन्होंने 29 फरवरी, 1996 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें याचिकाकर्ता को उनके खिलाफ लगाए गए सभी आरोपों से बरी कर दिया गया क्योंकि जांच अधिकारी के अनुसार, कोई भी आरोप साबित नहीं हुआ था।यद्यपि याचिकाकर्ता को जाँच अधिकारी द्वारा सभी आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया था, फिर भी जाँच रिपोर्ट याचिकाकर्ता को प्रदान की गई और उन्हें उसी पर अपनी टिप्पणी भेजने का निर्देश दिया गया।यह समझ में नहीं आता है कि यदि याचिकाकर्ता को जांच अधिकारी द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया था, तो उसे उस पर क्या टिप्पणी करनी चाहिए थी।हालाँकि, उन्होंने अपनी टिप्पणी प्रस्तुत की कि उन्हें जाँच अधिकारी द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया है और उनके खिलाफ आगे कोई कार्रवाई नहीं की गई है।हालांकि, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने उन पर 21 मार्च, 1996 को एक आदेश जारी किया, जिसके तहत उप प्रबंधक, गुणवत्ता नियंत्रण के पद से सहायक प्रबंधक के पद तक तत्काल प्रभाव से कम करने का जुर्माना उन पर लगाया गया था और उनका मूल वेतन सहायक प्रबंधक के वेतनमान के अधिकतम स्तर पर निर्धारित किया गया था, यानी रु। 3500 प्रति माह।यह भी आदेश दिया गया कि याचिकाकर्ता की निलंबन अवधि को नौकरी की अवधि में नहीं माना जाएगा।।आदेश की प्रति को अनुलग्नक पी-1 के रूप में जोड़ा गया है।याचिकाकर्ता ने वैधानिक अवधि के भीतर *सजा* के आदेश (अनुलग्नक पी-1) के खिलाफ एक वैधानिक अपील दायर की, लेकिन 5 मई, 1998 के आदेश के अनुसार, अनुलग्नक पी-3 की प्रतिलिपि, अपील को खारिज कर दिया गया।इसलिए वर्तमान रिट याचिका दायर की गई ।

(2) यहां यह देखा जा सकता है कि याचिकाकर्ता सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने पर 31 मार्च, 1996 को सेवा से सेवानिवृत्त हो गया था।याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा यह तर्क दिया जाता है कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण स्वयं जांच करने वाला प्राधिकरण नहीं था।यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत था, तो उसे याचिकाकर्ता को अनुशासनात्मक प्राधिकारी को यह समझाने में सक्षम बनाने के लिए कि जांच अधिकारी के निष्कर्ष अच्छी तरह से आधारित हैं और जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने के लिए कोई कानूनी और वैध आधार या आधार नहींहै, असहमति के कारण प्रस्तुत किए जाने चाहिए थे। ।याचिकाकर्ता के अनुसार, यह उचित अवसर और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को पूरी तरह से अस्वीकार करने के बराबर है और विवादित आदेश केवल इसी आधार पर निष्फल किए जाते हैं।मान लीजिए, वर्तमान मामले में, अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमति जताई थी, लेकिन असहमति के कारणों को कभी भी याचिकाकर्ता को नहीं बताया गया और न ही प्रस्तुत किया गया।यहां यह देखा जा सकता है कि जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा दर्ज किए गए कारण केवल 21 मार्च, 1996 के दंड के विवादित आदेश, प्रतिलिपि अनुलग्नक पी-1 में निहित हैं।दिए गए कारण इस प्रकार हैं:—

"और जहां नई दिल्ली में तैनात सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव श्री के. एन. श्रीवास्तव को उक्त श्री पी. एन. वर्मा के खिलाफ लगाए गए आरोपों की जांच के लिए जांच *प्राधिकरण* के रूप में19 सितंबर, 1995 के आदेश के अनुसार नियुक्त किया गया था-29 फरवरी, 1996 को प्रस्तुत की गई जांच रिपोर्ट के निष्कर्षों के अनुसार अभियोजन पक्ष आरोपों को साबित करने में सक्षम नहीं है और तदनुसार, आरोप साबित नहीं हुए हैं।

और चूंकि मौजूदा निर्देशों के अनुसार, जांच प्राधिकरण की जांच रिपोर्ट की एक प्रति 4 मार्च, 1996 *के सम*संख्या के पत्र के माध्यम से उक्त श्री पी. एन. वर्मा को अभ्यावेदन यदि कोई हो तो रिपोर्ट प्राप्त होने की तारीख से 7 दिनों के भीतर,जो कि13 मार्च,1996 को प्रस्तुत करने के लिए उपलब्ध कराई गई थी। ।श्री पी. एन. वर्मा ने 10 मार्च, 1996 को अपने अभ्यावेदन में तर्क दिया है कि उन्होंने अनिवार्य सुरक्षा जांच की थी और इसलिए उन्हें जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है।उनका दूसरा आधार यह है कि उन्होंने लोगों के स्थानांतरण के लिए कहा था और इस आशय के उनके अनुरोध को पूरा नहीं किया गया था।

और चूंकि मामले के जांच कार्यवाही के साथ संलग्न सभी प्रासंगिक अभिलेखों को देखने के बाद, और मामले की परिस्थितियों को कम करने और उक्त श्री पी. एन. वर्मा के खिलाफ आरोपों की गंभीरता को कम करने के बाद, अधोहस्ताक्षरित व्यक्ति जांच अधिकारी के निष्कर्षों से सहमत नहीं है क्योंकि नमूने की जांच की किसी भी प्रणाली में, यदि इसे ठीक से किया जाता है, तो ऐसा नहीं हो सकता कि बी. आर. एल. चावल का अस्तित्व अज्ञात ना होता। तथ्य यह है कि जांच अधिकारी ने सी. ओ. द्वारा नियमित रूप से दायर किए गए दस्तावेज़ पर विश्वास किया और बिना इस बात पर ध्यान दिए कि बी. आर. एल. चावल

भौतिक रूप से वहीं था, उनके निष्कर्ष गलत हैं और गलत तथ्यों पर आधारित हैं।"

(3) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के अनुसार, असहमत होने के लिए उपरोक्त कारणों को शायद ही कोई कारण कहा जा सकता है और वास्तव में यह आदेश बिना कारण बताए दिया आदेश है ।याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने विनियमों के विनियम 59 की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया, जिसका संदर्भ इसके बाद दिया जाएगा।

(4) अपील में, याचिकाकर्ता ने विशेष रूप से यह मुद्दा उठाया था कि रिपोर्ट के साथ-साथ, जांच अधिकारी के निष्कर्षों के साथ अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा असहमति के कारण उन्हें कभी नहीं दिए गए थे।अपीलीय प्राधिकरण अपने आदेश में केवल यह मानता है कि आरोप संख्या 3 पर, कुछ पर्यवेक्षी चूक थी।प्रथम और द्वितीय आरोप पर, अपीलीय प्राधिकारी ने निम्नलिखित टिप्पणी कीः—

"अभिलेख संकेत नहीं करते हैं कि पहला मुद्दा निचले कर्मचारियों के साथ मिलीभगत के बारे में साबित नहीं हुआ है, जैसा कि जांच अधिकारी द्वारा निष्कर्ष निकाला गया था।वास्तव में, सी. ओ. ने अधीनस्थ कर्मचारियों के खिलाफ क्षेत्रीय कार्यालय को एक रिपोर्ट भेजी थी और मिलीभगत का सवाल ही नहीं उठा।

दूसरे पहलू के संबंध में, जैसा कि आरोपित अधिकारी द्वारा प्रस्तुत किया गया था और अभिलेखों द्वारा संकेत दिया गया था, उन्होंने दिसंबर, 1994 के बाद मालेरकोटला और सरिग्रुर में कोई निरीक्षण नहीं किया।इसलिए, लापरवाही करने वालों की पहचान करने और उनकी मिलीभगत पर रिपोर्ट करने का सवाल ही नहीं उठा।मेरा मानना है कि यह आरोप साबित नहीं हुआ है।"

(5) आरोप संख्या 3 पर यह देखा गया कि "इसलिए, यह स्पष्ट है कि सी. ओ. के खिलाफ पर्यवेक्षी चूक का आरोप किसी भी संदेह से परे स्थापित किया गया है।

(6)प्रतिवादीगण के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि सबसे पहले विनियमों के अनुसार, जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा दर्ज किए गए कारणों, यदि कोई हो, के साथ जांच रिपोर्ट की प्रति प्रदान करना आवश्यक नहीं है और दूसरा, प्रतिकूल प्रभाव दिखाया जाना चाहिए कि याचिकाकर्ता को जांच अधिकारी के निष्कर्षों से भिन्न होने के कारणों की आपूर्ति नहीं की गई थी और चूंकि कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं दिखाया गया था, इसलिए आक्षेपित आदेश अनुलग्नक पी-1 और पी- 3 पूरी तरह से कानूनी हैं।इसके अलावा, यह प्रस्तुत किया गया कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में कि जब याचिकाकर्ता 31 मार्च, 1996 को सेवानिवृत्त हो रहा था, तो प्रतिवादी-निगम के पास शायद ही कोई समय बचा था कि वह याचिकाकर्ता को जांच रिपोर्ट और दर्ज किए गए जाँच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने के कारणों के साथ नोटिस जारी करे।

(7)पक्षों के विद्वान वकीलों को सुनने के बाद, हमारा विचार है कि यह याचिका सफल होने के लिए योग्य। जहां तक यह प्रश्न है कि विनियम जांच रिपोर्ट की आपूर्ति के लिए या अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा दर्ज किए गए कारणों का जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से भिन्न होने का , *यह कहने के लिए पर्याप्त है कि भारत संघ* में शीर्ष *न्यायालय और अन्य बनाम मोहम्मद।रमजान खान* (1) और राम किशन बनाम यू. ओ. आई. और अन्य (2) ने अभिनिर्धारित किया कि प्राकृतिक न्याय के नियमों की यह आवश्यकता है कि जहां अनुशासनात्मक प्राधिकारी स्वयं जांच करने वाला प्राधिकारी नहीं है, वहां जांच अधिकारी की रिपोर्ट, जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने के लिए केंद्रीय प्राधिकारी द्वारा कारणों के साथ, अपराधी अधिकारी को दी जानी चाहिए ताकि उसे रिपोर्ट और/या जांच अधिकारी से असहमत होने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा दर्ज किए गए कारणों को चुनौती देने का अवसर दिया *जा सके।देविंदर सिंह* ग्रोवर *बनाम भारतीय खाद्य निगम और दूसरे (3)* मामले में इस अदालत की खंड पीठ के फैसले में (फैसला हम में से एक (आर. एस. मोंगिया, जे.) द्वारा लिखा गया था। श्री हेमंत गुप्ता, जो इस मामले में निगम के वकील हैं, उस मामले में निगम के वकील भी थे और उन्होंने

(1) 1991 (1) एसएलआर 159
(2) निर्णय आज 1995 (7) एस. सी. 43
(3) 1997(2) हाल के सेवा निर्णय 689

वर्तमान रिट याचिका में उठाए गए समान तर्क उठाए थे।यह उस निर्णय के पैरा 3 से 6 को

पुनः प्रस्तुत करने के विपरीत होगाः—

"3. प्रतिवादीगण की ओर से यह विवादित नहीं है कि बर्खास्तगी के आदेश पारित करने से पहले अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा असहमति के कारण याचिकाकर्ताओं को नहीं दिए गए थे।इस स्तर पर भारतीय खाद्य निगम (कर्मचारी) विनियम, 1971 के विनियम 59 का संदर्भ दिया जा सकता है, जो जांच रिपोर्ट पर कार्रवाई से संबंधित है और इसमें लिखा हैः

"59. जाँच रिपोर्ट पर कार्रवाईः

(1) अनुशासनात्मक प्राधिकारी, यदि वह स्वयं जांच करने वाला प्राधिकारी नहीं है, तो उसके द्वारा लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए, मामले को आगे की जांच और रिपोर्ट के लिए जांच करने वाले प्राधिकारी को भेज सकता है, और उसके बाद जांच करने वाला प्राधिकारी जहां तक हो सके, विनियमन 58 के प्रावधानों के अनुसार आगे की जांच करने के लिए आगे बढ़ेगा।

(2) अनुशासनात्मक प्राधिकारी, यदि वह किसी भी आरोप के लेख पर पूछताछ प्राधिकारी के निष्कर्षों से असहमत है

तो यदि रिकॉर्ड पर साक्ष्य इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त है,इस तरह की असहमति के लिए अपने कारणों को दर्ज करें और इस तरह के आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्ष दर्ज करें,

(3) यदि सभी या किसी भी आरोप के लेख पर अपने निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए अनुशासनात्मक प्राधिकरण की राय है कि विनियमन 54 के खंड (i) से एफ. टी. वी. में निर्दिष्ट दंडों में से कोई भी कर्मचारी पर लगाया जाना चाहिए, तो वह -•विनियम 58 में कुछ भी निहित होने के बावजूद, ऐसा जुर्माना लगाने का आदेश दें।

(4) यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी सभी या किसी आरोप के लेख पर अपने निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए और जांच के दौरान प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर यह राय रखता है कि विनियमन 54 के खंड (v) से (ix) में निर्दिष्ट दंड में से कोई भी निगम कर्मचारी पर लगाया जाना चाहिए, तो वह ऐसा जुर्माना लगाने का आदेश देगा और निगम कर्मचारी को लगाए जाने वाले प्रस्तावित दंड पर प्रतिनिधित्व करने का कोई अवसर देना आवश्यक नहीं होगा।

(5) XXXXXXXXX "

4. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा पूछताछ अधिकारी के निष्कर्षों के साथ असहमति के कारणों की गैर-आपूर्ति ने उन्हें प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है क्योंकि बर्खास्तगी के विवादित आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करते हैं।याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने श्री न्यायमूर्ति के. रामास्वामी (अब सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश) द्वारा 1989 (7) एसएलआर 688 के रूप में रिपोर्ट किए गए आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के एक फैसले का हवाला दिया है, जिसमें उपरोक्त विनियमन विचार के लिए आया था और

यह अभिनिर्धारित किया गया था कि विनियमन 59 (2) में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को पढ़ा जाएगा और अनुशासनात्मक प्राधिकरण पर यह दायित्व होगा कि वह अपराधी अधिकारी को असहमति के कारण प्रदान करे।आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के इस निर्णय पर 1995 (5) एस. एल. आर. 11 में इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने भरोसा किया था, जहां वही विनियम विचार के लिए आया था।उपरोक्त फैसले के खिलाफ लेटर पेटेंट अपील भी खारिज हो जाती है।राम किशन बनाम भारतीय *संघ और अन्य* जे. *टी. 1995 (7)* एस. सी. 43 मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर और अधिक भरोसा किया गया है, जिसमें दोषी अधिकारी को कारणदर्शक नोटिस जारी किया है कि विशेष सजा क्यों नहीं दी जाए,अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने जाँच रिपोर्ट के साथ असहमति के कारणों का उल्लेख नहीं किया।इन परिस्थितियों में यह अभिनिर्धारित किया गया कि कारण दर्शाओ नोटिस उचित नहीं था क्योंकि यह अनुशासनात्मक प्राधिकरण को यह दिखाने के लिए कि असहमति के कारण अच्छी तरह से आधारित नहीं थे, अपराधी अधिकारी के अधिकार का उल्लंघन कर रहा था सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार यह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है।

5. दूसरी ओर प्रतिवादीगण के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि यदि अनुशासनात्मक प्राधिकरण स्वयं जांच करने वाला प्राधिकरण है, तो रिपोर्ट अपराधी अधिकारी को देने की आवश्यकता नहीं है और जांच रिपोर्ट के आधार पर अनुशासनात्मक प्राधिकरण स्वयं सजा दे सकता है और यदि अनुशासनात्मक प्राधिकरण जांच अधिकारी की रिपोर्ट से असहमत है और अपने स्वयं के निष्कर्ष देता है तो यह अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा स्वयं जांच करने जितना ही अच्छा है और इसलिए, असहमति के कारणों को अपराधी अधिकारी को देने की आवश्यकता नहीं है।इसके अलावा, याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने कोई पूर्वाग्रह नहीं दिखाया है जो याचिकाकर्ताओं के लिए असहमति के कारणों की आपूर्ति न करने के कारण हो सकता है।इसके अलावा, असहमति के कारण 'महत्वपूर्ण' नहीं हैं जो अपराधी अधिकारी को प्रदान की जानी है।उनके तर्क के समर्थन में, प्रतिवादी के विद्वान वकील ने प्रबंध निदेशक, ईसीआईएल, हैदराबाद बनाम बी. करुणाकर, 1993 (5) एसएलआर 532 में शीर्ष अदालत के *एक फैसले का हवाला* दिया।उस *मामले में,* शीर्ष अदालत ने कहा कि जांच रिपोर्ट की प्रति की आपूर्ति केवल एक अनुष्ठान नहीं है और यह दिखाया जाना चाहिए कि पूर्वाग्रह इसकी आपूर्ति न होने के कारण हुआ है।

(6) पक्षों के विद्वान वकील को सुनने के बाद, हमारी राय है कि याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील के तर्क में पर्याप्त बल है।प्राकृतिक न्याय के नियमों का पूरा विचार यह है कि अपराधी अधिकारी को पता होना चाहिए कि उसके खिलाफ क्या है ताकि वह अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा कार्रवाई करने से पहले उसका सामना कर सके। ।भारत संघ बनाम

मोहम्मद।रमजान, 1991 (1) एस. *एल. आर. 159,* माननीय *शीर्ष न्यायालय* ने कहा कि यदि जांच अधिकारी स्वयं अनुशासनात्मक प्राधिकरण नहीं है तो प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के लिए आवश्यक है कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण को यह दिखाने के लिए कि उसे जांच अधिकारी से सहमत नहीं होना चाहिए, दोषी अधिकारी को जांच रिपोर्ट प्रदान की जानी चाहिए।इसके विपरीत, यदि अनुशासनात्मक प्राधिकरण जांच अधिकारी की रिपोर्ट से असहमत है, तो प्राकृतिक न्याय के नियमों के लिए आवश्यक होगा कि अपराधी अधिकारी को पता होना चाहिए कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण जांच द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से सहमत क्यों नहीं है और उन्हें अनुशासनात्मक प्राधिकरण को ऐसा न करने के लिए प्रेरित करने का मौका दिया जाना चाहिए।यह प्राकृतिक न्याय के नियमों की न्यूनतम आवश्यकता है।हम आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण के साथ जैसा कि ऊपर देखा गया है, जिसके बाद इस न्यायालय के एक विद्वान न्यायाधीश, ने भी इसका पालन किया था, जिसके खिलाफ भी लेटर पेटेंट अपील खारिज किया जाता है।"जाँच रिपोर्ट के साथ असहमति के कारणों की गैर-आपूर्ति ने याचिकाकर्ताओं को स्पष्ट रूप से पूर्वाग्रहित कर दिया है क्योंकि सजा देने से पहले, वे कभी नहीं जानते कि जाँच अधिकारी की रिपोर्ट से असहमत होने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकरण के पास क्या वज़नदार कारण है। जांच से असहमति के कारणों सहित जांच की रिपोर्ट इन परिस्थितियों में वास्तविक जांच रिपोर्ट होगी, जिसे प्रतिवादी के विद्वान वकील द्वारा उद्धृत निर्णय के अनुसार भी अपराधी अधिकारी को प्रदान किया जाना चाहिए।

(8) ऊपर की गई टिप्पणियों को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाएगा कि प्रतिवादीगण के लिए विद्वान वकील द्वारा उठाए गए सभी तर्कों को खारिज कर दिया गया था।हमें बताया गया है कि निगम ने उस फैसले के खिलाफ आगे कभी कोई अपील दायर नहीं की और यह अंतिम हो गया है।हम इस मामले में कोई विशिष्ट विशेषता नहीं पाते हैं।

(9) आगे यह जोड़ा जा सकता है कि सर्वोच्च *न्यायालय ने महाराष्ट्र राज्य बनाम भाईशंकर अवलराम* जोशी *और एक अन्य (4)* में कहा कि जांच रिपोर्ट प्रदान करने में विफलता उचित अवसर से इनकार करने के बराबर है।हालाँकि वह मामला भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 (2) के तहत था, फिर भी मोहम्मद रमज़ान के मामले में उन्हीं सिद्धांतों को *दोहराया गया है* क्योंकि यह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों को अस्वीकार करने के बराबर है।भैशंकर *अवलराम जोशी के मामले (ऊपर)* में उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की:—

(4) ए. आई. आर. एफ. 1969 एससी:13022

"यह सच है कि यह सवाल कि क्या सरकारी कर्मचारी को उचित अवसर दिया गया है या नहीं, प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर होना चाहिए, लेकिन यह बहुत ही दुर्लभ मामलों में होगा कि वास्तव में यह कहा जा सकता है कि सरकारी कर्मचारी पूछताछ अधिकारी की रिपोर्ट की गैर-आपूर्ति से पूर्वाग्रहित नहीं है।"

(10) पूर्वगामी कारणों से, हम इस रिट याचिका और दिनांक 21 मई, 1996 के आदेशों जो कि प्रति अनुलग्नक पी-1 को रद्द करने, और 5 मई, 1998 जो कि अनुलग्नक पी-3है को रद्द करने की अनुमति देते है।

(11) पर्याप्त सावधानी के मामले में हम यहां यह देख सकते हैं कि यह निगम को याचिकाकर्ता के खिलाफ आगे बढ़ने से नहीं रोकेगा, यदि कानून के तहत, किसी सेवानिवृत्त व्यक्ति के खिलाफ कोई भी सजा देने के लिए कार्यवाही जारी रह सकती है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सुखवीर कौर
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
हिसार, हरियाणा